॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

एक अद्वितीय सन्त

(परमश्रद्धेय स्वामीजी श्रीरामसुखदासजी महाराजके विचार)

श्रीशरणानन्दजी महाराज एक क्रान्तिकारी संन्यासी थे। वे अवधूत कोटिके महात्मा थे। उनके जैसा सन्त पहले नहीं हुआ! उनकी वाणी विलक्षण है। मैंने अनेक सन्तोंकी वाणी पढ़ी है, पर शरणानन्दजीकी वाणी सबसे विलक्षण है! उनके शब्द बड़े चुने हुए हैं और विशेष अर्थ रखते हैं। उनका विवेचन आदि शंकराचार्यजीसे भी तेज है। उनकी साधना विवेक-प्रधान होनेसे उनकी वाणीमें विवेककी प्रधानता है। मैं भी उसीका अनुसरण करता हूँ।

शरणानन्दजीकी बुद्धि बहुत विलक्षण थी। वे कहते थे कि भगवान्‌ने मुझे आवश्यकतासे अधिक बुद्धि दे रखी है! उनकी बुद्धि भी तेज थी और पकड़ भी तेज थी। उनमें पचानेकी शक्ति भी थी, जैसे वैश्योंमें धन पचानेकी शक्ति होती है। इसलिये इतना ऊँचा बोध होनेपर भी वे उसे प्रकट नहीं करते थे। कारण कि उनकी दृष्टिमें सब कुछ वासुदेव ही था। वे किसी बातको व्यक्तिगत नहीं मानते थे।

शरणानन्दजीकी वाणीमें युक्तियोंकी, तर्ककी प्रधानता है। उनको कोई काट नहीं सकता। मुझे भी तर्क पसन्द है। परन्तु मैं शास्त्रविधिको साथ रखते हुए तर्क करता हूँ।

शरणानन्दजीकी पुस्तकोंमें यह बात देखनेमें आती है कि वे बोध कराना चाहते हैं, सिखाना नहीं चाहते। उनकी बातें बन्दूककी गोलीकी तरह असर करती हैं! वे अपनी बातको परोक्षरूपसे कहते हैं, जिससे साधक कोरी बातें न सीख जाय। वे 'अभ्यास' न कराकर 'स्वीकार' कराते हैं, 'बौद्धिक व्यायाम' न कराकर 'अनुभव' कराते हैं।

शरणानन्दजीकी भाषा कठिन होनेमें मुझे दो कारण प्रतीत होते थे—पहला, पढ़ानेकी कलासे अनभिज्ञता और दूसरा, गूढ़ भाषामें लिखनेसे पाठक उसमें अधिक विचार करे, जिससे बात उसकी बुद्धिमें बैठ जाय। उन्होंने सोच-समझकर ऐसी भाषाका प्रयोग किया, जिससे पढ़नेवालेको बुद्धि लगानी पड़े। कारण कि सरल भाषाका प्रयोग करनेसे पढ़नेवाला बातें सीख जाता है, बुद्धि नहीं लगाता। परन्तु अब मुझे दीखता है कि उनकी दृष्टिमें सब कुछ वासुदेव ही है, फिर वे किसको अज्ञानी, बेसमझ मानें? वे दूसरेको बेसमझ मानेंगे, तभी तो उसे समझायेंगे!

शरणानन्नदजीके समकक्ष कोई नहीं है! उनके समान कोई दार्शनिक नहीं हुआ। शंकराचार्य, रामानुजाचार्य आदि जितने आचार्य हुए हैं, उन सबसे तथा छहों दर्शनोंसे शरणानन्दजीका दर्शन तेज है। उनकी बातें सम्पूर्ण शास्त्रोंका अन्तिम तात्पर्य है। अबतक वेदान्तका जितना विवेचन हो चुका है, उससे आगे शरणानन्दजीकी वाणी है। शरणानन्दजी कहते थे कि एक नये लोकका निर्माण हो रहा है; क्योंकि अहम्‌का इतना अभाव पहले किसी दार्शनिकका नहीं हुआ! उन्होंने क्रिया और पदार्थके आश्रयका सर्वथा त्याग कर दिया था, जो आजतक किसी सन्तने नहीं किया। इसलिये वे क्रान्तिकारी संन्यासी थे। उनका जो इतना विकास हुआ, वह शरणागतिके कारण ही हुआ।

मैं सत्यका अनुयायी हूँ, व्यक्ति या सम्प्रदायका नहीं। मुझे किसी सन्तकी बातसे पूरा सन्तोष नहीं होता था। आदि शंकराचार्यके सिद्धान्तसे भी सन्तोष नहीं होता था। परन्तु शरणानन्दजीकी बातोंसे पूरा सन्तोष हो गया! वे कर्मयोग, ज्ञानयोग तथा भक्तियोग—तीनों योगोंके आचार्य थे। वे भक्ति, प्रेमको अन्तिम तत्त्व मानते थे। उनमें क्रियाका आग्रह नहीं था। मुझे शरणानन्दजीका मत मान्य है। कर्मयोगकी बात मैंने शरणानन्दजीसे ही सीखी है। उनकी पुस्तक 'मानवकी मांग' पढ़कर मेरी उनपर श्रद्धा हुई।

शरणानन्दजीने एक बार मुझसे कहा था कि आप मेरे ही भावोंका प्रचार करते हैं। उनका कहना सही था। कर्णके पैर कुन्तीके पैरोंसे मिलते थे, इसलिये युधिष्ठिरको कर्णके पैर स्वाभाविक ही प्रिय लगते थे, पर क्यों लगते हैं—इसका उन्हें पता नहीं था। ऐसे ही आरम्भसे मुझे शरणानन्दजीकी बातें प्रिय लगती थीं। पर इसका कारण पीछे

पता चला कि शरणानन्दजीकी बात गीताकी बात है, और गीता मुझे प्रिय लगती ही है!

शरणानन्दजीकी बातें मेरी प्रकृतिके अनुकूल पड़ती हैं। वैसी प्रकृति मेरी शुरूसे रही है।

शरणानन्दजीकी बातें बड़ी मार्मिक और गहरी हैं। गहरा विचार किये बिना हरेकके जल्दी समझमें नहीं आतीं। वे जो बातें कहते हैं, वे छहों दर्शनोंमें नहीं मिलतीं। केवल गीतामें और भागवतके दशम स्कन्धमें मिलती हैं। पर वे भी पहले नहीं दीखतीं। जब शरणानन्दजीकी बातें पढ़ लेते हैं, तब वे गीता और भागवतमें भी दीखने लगती हैं। वे सीधे मूलको पकड़ते हैं, सीधे कलेजा पकड़ते हैं! इतना प्रचण्ड ज्ञान होते हुए भी इस विशेषताको उन्होंने अपनी नहीं माना।

शरणानन्दजीमें यह विलक्षणता ईश्वरकी शरणागतिसे ही आयी थी। उन्होंने एक बार कहा था कि 'मेरा स्वभाव है, जिस बातको पकड़ लेता हूँ, उसे फिर छोड़ता नहीं'। उन्होंने शरणागतिको पकड़ लिया था। भगवान्‌के शरणागत होनेसे उनमें ज्ञानका प्रवाह आ गया! उनकी वाणीमें स्वतः गीताका तत्त्व उतर आया! उनकी बातोंसे गीताका अर्थ खुलता है। उन्होंने जड़-चेतनका जैसा विश्लेषण किया है, वैसा किसी सन्तकी वाणीमें नहीं मिलता।

शरणानन्दजीकी बातोंका सार है—अपनी व्यक्तिगत कोई भी वस्तु नहीं है, और एक सत्ताके सिवाय कुछ भी नहीं है।

शरणानन्दजीने 'मानव सेवा संघ' बनाया, पर उसका अधिक प्रचार नहीं हुआ। कारण कि उन्हें कोई अच्छा साथ देनेवाला नहीं मिला। केवल एक देवकीजी मिलीं।

हम कोई बात कहते हैं तो हमें प्रमाणकी आवश्यकता रहती है, पर शरणानन्दजीको प्रमाणकी आवश्यकता है ही नहीं! उन्होंने जो लिखा है, उससे आगे कुछ नहीं है—ऐसी मेरी धारणा है। उनकी बातें सब मनुष्य मान सकते हैं। उनकी युक्तियोंका किसीसे विरोध नहीं है।

जैसे शरणानन्दजीने कहा है कि भगवान् क्या हैं—इसे खुद भगवान् भी नहीं जानते, ऐसे ही शरणानन्दजी क्या हैं—इसे खुद शरणानन्दजी भी नहीं जानते! शरणानन्दजीके समान मुझे दूसरा कोई नहीं दीखता। दीखना दुर्लभ है!

शरणानन्दजी हमें मिल गये, उनकी पुस्तकें पढ़नेको मिल गयीं—यह भगवान्‌की हमपर बड़ी कृपा है!

—राजेन्द्र कुमार धवन